पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2012 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 14312

==========

बृज किशोर सिंह पिता स्वर्गीय इंद्रदेव सिंह निवासी ग्राम नरहरपुर, थाना- मढ़ौरा, जिला- सारण

... ... याचिकाकर्ता

बनाम्

1. भारतीय स्टेट बैंक मुख्य महाप्रबंधक, स्थानीय प्रधान कार्यालय, पटना के माध्यम से
2. महाप्रबंधक (एक), स्थानीय प्रधान कार्यालय, भारतीय स्टेट बैंक, पटना
3. उप महाप्रबंधक आंचलिक कार्यालय, भारतीय स्टेट बैंक, मुजफ्फरपुर
4. सहायक महाप्रबंधक भारतीय स्टेट बैंक, क्षेत्रीय-वीएस, आंचलिक कार्यालय, मुजफ्फरपुर
5. उप महाप्रबंधक अपील और समीक्षा शून्य अपील और समीक्षा, कॉर्पोरेट सेंटर, मुंबई

... ...प्रत्यर्थी

==========

उपस्थितः

अपीलार्थी की ओर से	:	श्री शेखर सिंह, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी की ओर से	:	श्री विनाद बिहारी सिंहा, अधिवक्ता
		श्री अनिरूद्ध प्रसाद सिंह, अधिवक्ता
		श्री अजय दत्त मिश्रा, अधिवक्ता
		श्री अमरजीत चौधरी, अधिवक्ता

==========

सेवा कानून—दंड—तीन वर्षों के लिए समय पैमाने में वेतन के तीन स्तरों तक कमी के द्वारा बिना संचयी प्रभाव के—याचिकाकर्ता ने बैंक के हितों की रक्षा करने और अपनी जिम्मेदारियों को पूरी निष्ठा और मेहनत से निभाने के लिए ईमानदार कदम उठाने में विफल रहा और याचिकाकर्ता को बैंक को हुए वित्तीय नुकसान के लिए जिम्मेदार ठहराया गया जो कि दुराचार के अंतर्गत आता है, क्योंकि याचिकाकर्ता को खाता खोलने के लिए अधिकृत करते समय चूक/अनियमितताएँ करते पाया गया—जमा करने वाले और परिचयकर्ता का सही तरीके से साक्षात्कार नहीं लिया गया—खाता धारक को

उसके रिकॉर्ड किए गए पते पर सत्यापन के उद्देश्य से धन्यवाद पत्र नहीं भेजा गया और जमा करने वाले द्वारा प्रस्तुत तीन चेक "S" बुक के माध्यम से नहीं भेजे गए और चेक बैंक में क्लियरिंग के माध्यम से प्रस्तुत किए गए, और इसके परिणामस्वरूप प्राप्त राशि उसी दिन जमा करने वाले के खाते में जमा की गई और बाद में देखा गया कि जमा करने वाला उस चेक का वास्तविक लाभार्थी नहीं था जिसने बैंक को 73,500/- रुपये का नुकसान पहुँचाने के लिए धन निकाला/धोखाधड़ी की—याचिकाकर्ता का कार्य लापरवाही नहीं बल्कि दुर्भावनापूर्ण इरादे के साथ की गई दुराचार है—रिट याचिका खारिज। ***(पैरा 19, 20, 23)***

*(2005) 8 एससीसी 351; (2006) 7 एससीसी 410—**निर्भर किया गया** ।*

*(2012) 4 एससीसी 407—**सुभिन्न***

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री पुर्णनेन्दू सिंह

मौखिक निर्णय

दिनांक-01-07-2024

याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री शेखर सिंह, भारतीय स्टेट बैंक की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री बिनोद बिहारी सिन्हा तथा श्री अनिरुद्ध प्रसाद सिंह, श्री अजय दत्त मिश्रा और श्री अमरजीत चौधरी को सुना गया।

2. भारतीय स्टेट बैंक की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री बिनोद बिहारी सिन्हा ने प्रारंभिक आपत्ति उठाई है कि वर्तमान रिट याचिका सुनवाई योग्य नहीं है, क्योंकि इसे 7 वर्ष से अधिक की देरी के बाद दायर किया गया है, जिसमें दण्ड आदेश दिनांक 18.01.2005, अपीलीय आदेश दिनांक 02.08.2005 तथा पुनरीक्षण आदेश दिनांक 06.06.2006 को रद्द करने की मांग की गई है।

3. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री शेखर सिंह ने प्रस्तुत किया है कि प्रतिवादियों द्वारा उठाए गए तकनीकी आधार, जुर्माना आदेश को चुनौती देने में याचिकाकर्ता के आड़े नहीं आ सकते, जिसे याचिकाकर्ता ने भुगता है तथा जिसे अपीलीय प्राधिकारी के साथ-साथ पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा भी पुष्टि की गई है।

4. विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता को बिना संचयी प्रभाव के तीन वर्षों के लिए समयमान वेतन में तीन चरणों में निम्न स्तर पर कटौती करके दंड के आदेश द्वारा दंडित किया गया था। प्रतिवादियों की ओर से उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति के उत्तर में,

विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि उन्होंने रिट याचिका के पैराग्राफ संख्या 11 में जानकारी दी है कि रिट याचिका दायर करने में देरी जानबूझकर नहीं की गई है, बल्कि याचिकाकर्ता ने जानकारी दी है कि याचिकाकर्ता स्वस्थ नहीं था और वह कई बीमारियों से पीड़ित था और साथ ही, उसके परिवार में भी शोक था और इन तथ्यों को प्रतिवादी अधिकारियों द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया है। अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश की आलोचना करते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता द्वारा दायर कारण बताओ उत्तर पर पूरी तरह से विचार नहीं किया गया है और उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना और कोई कारण बताए बिना, दंड का आदेश बरकरार नहीं रखा जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने अपने तर्क के समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **रवि यशवंत भोईर बनाम जिला कलेक्टर, रायगढ़ एवं अन्य** के मामले में निर्धारित कानून के पैराग्राफ संख्या 44 पर भरोसा किया है, जो **2012(4) एससीसी 407** में रिपोर्ट किया गया है।

5. इन पृष्ठभूमियों में, विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 18.01.2005 (अनुलग्नक 4) का आदेश कानून की नज़र में दोषपूर्ण है क्योंकि याचिकाकर्ता के विरुद्ध कथित कदाचार का कोई मामला नहीं बनता है। वित्तीय अनियमितता करने के लिए याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाया गया आरोप इस विशिष्ट निष्कर्ष के अभाव में स्थापित नहीं होता है कि याचिकाकर्ता ने स्वयं को लाभ पहुँचाया है या बैंक को नुकसान पहुँचाया है। अधिक से अधिक, याचिकाकर्ता को प्रक्रियागत चूक के लिए दोषी ठहराया जा सकता है जो कदाचार नहीं है।

6. *इसके विपरीत,* भारतीय स्टेट बैंक की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि रिट याचिका देरी और लापरवाही के आधार पर विचारणीय नहीं है, इस तथ्य पर विचार करते हुए कि दंड आदेश 18.01.2005 को पारित किया गया था और उसके बाद याचिकाकर्ता ने अपील दायर की और अपीलीय प्राधिकारी ने दंड के आदेश की पुष्टि करते हुए दिनांक 02.08.2005 के आदेश द्वारा उसकी अपील को खारिज कर दिया और उसके बाद याचिकाकर्ता ने अपीलीय आदेश के खिलाफ समीक्षा की, जिसे समीक्षा प्राधिकारी ने दिनांक 06.06.2006 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया। रिट याचिका लगभग छह साल की देरी के बाद वर्ष 2012 में दायर की गई है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि गुण-दोष के आधार पर भी, दंड के आदेश में इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है और न्यायिक समीक्षा की आवश्यकता नहीं है। सभी निर्धारित प्रक्रियाओं का पालन करने के बाद मामूली सजा दी गई है और रिकॉर्ड पर सामग्री के आधार पर प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का

पालन करते हुए दंड आदेश पारित किया गया है। अभिलेखों से यह भी पता चलता है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा बनाई गई राय ठोस कारणों को दर्शाने वाले साक्ष्यों पर आधारित है। इन पृष्ठभूमियों में विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि रिट याचिका में इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. पक्षों की बात सुनी गई।

8. वर्तमान रिट याचिका को जन्म देने वाले तथ्य संक्षेप में ये हैं कि नियुक्ति प्राधिकारी ने 18.01.2005 को सजा का आदेश पारित किया था जिसमें कहा गया था कि याचिकाकर्ता को श्री संजीव कुमार सिंह के एसबी खाता संख्या 01190010729 को खोलने के लिए अधिकृत करते समय चूक/अनियमितताएं करते पाया गया था; जमाकर्ता और परिचयकर्ता का उचित रूप से साक्षात्कार नहीं किया गया था; खाताधारक के पते की सत्यता की पुष्टि करने के लिए उसके दर्ज पते पर कोई धन्यवाद पत्र नहीं भेजा गया और जमाकर्ता द्वारा 10 सितंबर, 2002 को प्रस्तुत किए गए सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, नई दिल्ली पर आहरित 73,785/- रुपये की राशि के तीन चेक "एस" बुक के माध्यम से नहीं भेजे गए और चेक 11 सितंबर, 2002 को सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, गोपालगंज को क्लियरिंग के माध्यम से प्रस्तुत किए गए और उससे प्राप्त राशि उसी दिन जमाकर्ता के खाते में जमा कर दी गई और बाद में यह पाया गया कि जमाकर्ता उक्त चेक का वास्तविक भुगतानकर्ता नहीं था, जिसने बैंक को 73,500/- रुपये की हानि पहुंचाते हुए चेक वापस ले लिया/धोखाधड़ी की। याचिकाकर्ता को अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता दी गई और उसका स्पष्टीकरण स्वीकार नहीं किया गया। इसके बाद, याचिकाकर्ता को "चूक के आरोप का विवरण" भेजा गया और उसे उक्त पत्र की प्राप्ति के 15 दिनों के भीतर भारतीय स्टेट बैंक अधिकारी सेवा नियम के नियम 68(4)(i) के अनुसार अपना लिखित बचाव प्रस्तुत करने के लिए कहा गया, ऐसा न करने पर यह माना जाएगा कि उसके पास बचाव के लिए कुछ नहीं है और बैंक मामले में आगे बढ़ेगा।

9. उक्त पत्र के अनुसार, याचिकाकर्ता ने 10 अगस्त, 2004 को अपना कारण बताओ नोटिस प्रस्तुत किया था, जिसमें उसने अपने खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों/अभियोगों का खंडन किया था, क्योंकि उसने दावा किया था कि उसने बैंक के हितों की रक्षा के लिए कोई भी संभव कदम उठाने में कोई चूक नहीं की है और भारतीय स्टेट बैंक अधिकारी सेवा नियम के नियम 50(4) के अनुसार अपने कर्तव्यों का पूरी निष्ठा और परिश्रम के साथ निर्वहन किया है।

10. नियुक्ति प्राधिकारी ने उत्तर से संतुष्ट न होते हुए भारतीय स्टेट बैंक अधिकारी सेवा नियम के नियम 50(4) के अनुसार याचिकाकर्ता की ओर से कदाचार पाया और महाप्रबंधक (एनडब्ल्यू-I)/नियुक्ति प्राधिकारी ने दिनांक 18.01.2005 के आदेश के तहत भारतीय स्टेट बैंक अधिकारी सेवा नियम के नियम 67(ई) के तहत लघु दंड के शीर्षक के तहत "संचयी प्रभाव के बिना 3 वर्षों के लिए समय वेतनमान में 3 चरणों तक निम्नतर स्तर पर कटौती" का दंड लगाया। याचिकाकर्ता को अपील करने की स्वतंत्रता दी गई। तदनुसार, याचिकाकर्ता ने 07.03.2005 को मुख्य महाप्रबंधक/अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील दायर की। अपीलीय प्राधिकारी ने मामले के अभिलेखों की जांच करने और नियुक्ति प्राधिकारी के निष्कर्षों से सहमति जताते हुए, दिनांक 02.08.2005 के आदेश के तहत याचिकाकर्ता पर लगाए गए दंड की पुष्टि करते हुए अपील को खारिज कर दिया। इसके बाद याचिकाकर्ता ने 23.09.2005 को समीक्षा याचिका दायर की। समीक्षा समिति ने 06.06.2006 के आदेश के तहत समीक्षा याचिका को खारिज कर दिया, तथा उसे दी गई सजा की पुष्टि करते हुए पाया कि याचिकाकर्ता ने लेखाकार के रूप में कार्य करते हुए आरोपों का खंडन करने के लिए कोई उल्लेखनीय योग्यता बिंदु नहीं उठाया है।

11. इससे पहले कि मैं रिट याचिका पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय करूं, क्या यह रिट याचिका, जो लगभग छह वर्षों के विलंब के बाद दायर की गई है और याचिकाकर्ता ने सभी उपायों का लाभ उठा लिया है, पर विचार किया जा सकता है?

12. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित यह सुस्थापित कानून है कि यदि यह पाया जाता है कि रिट याचिकाकर्ता देरी और लापरवाही का दोषी है, तो उच्च न्यायालय को इसे शुरू में ही खारिज कर देना चाहिए। इस मामले के तथ्यों के करीब, सर्वोच्च न्यायालय ने "**सी. जैकब बनाम भूविज्ञान और खनन निदेशक और अन्य (2008) 10 एससीसी 115** में रिपोर्ट की, जिसमें पाया गया कि कर्मचारी ने 20 साल बाद अपनी सेवाओं की समाप्ति के आदेश को अचानक चुनौती दी और सभी परिणामी लाभों का दावा किया, यह माना कि मांगी गई राहत अस्वीकार्य थी। इस संबंध में कानूनी स्थिति निम्नलिखित शब्दों में बताई गई थी: -

> *"10. राहत के लिए सरकार को भेजे गए हर अभ्यावेदन का उत्तर गुण-दोष के आधार पर नहीं दिया जा सकता। ऐसे मामलों से संबंधित अभ्यावेदन जो पुराने हो गए हैं या समय-सीमा के कारण वर्जित हो गए हैं, उन्हें दावे के गुण-दोष की जांच किए बिना केवल इसी आधार पर खारिज किया जा सकता है।*

विभाग से असंबंधित अभ्यावेदनों के संबंध में, उत्तर केवल यह सूचित करने के लिए हो सकता है कि मामला विभाग से संबंधित नहीं है या उचित विभाग को सूचित किया जाए। अधूरे विवरण वाले अभ्यावेदनों का उत्तर प्रासंगिक विवरण मांगकर दिया जा सकता है। ऐसे अभ्यावेदनों के उत्तर, कार्रवाई का नया कारण प्रस्तुत नहीं कर सकते या पुराने या मृत दावे को पुनर्जीवित नहीं कर सकते।

11. न्यायालय/न्यायाधिकरण जब किसी अभिवेदन पर विचार करने या उससे निपटने के लिए कोई निर्देश जारी किया जाता है, तो आमतौर पर निर्देशित व्यक्ति (निर्देशित व्यक्ति) मामले की योग्यता के आधार पर जांच करता है, क्योंकि उसे लगता है कि ऐसा न करना अवज्ञा के बराबर हो सकता है। जब न्यायालय या न्यायाधिकरण के निर्देश के अनुपालन में दावे या अभिवेदन पर विचार करके उसे खारिज करने का आदेश पारित किया जाता है, तो ऐसा आदेश पुराने दावे को पुनर्जीवित नहीं करता है, न ही किसी तरह के 'न्यायिक संबंध की स्वीकृति' के रूप में कार्यवाई के लिए नए कारण को जन्म देता है।

13. विलंब और लापरवाही के पहलू को दोहराते हुए, दी जा रही विवेकाधीन राहत को अयोग्य घोषित कर दिया जाएगा, सर्वोच्च न्यायालय ने **चेन्नई मेट्रोपॉलिटन वाटर सप्लाई एंड सीवरेज बोर्ड वी. टी. टी. मुरली बाबू** के मामले में, (2014) 4 एससीसी 108 में रिपोर्ट किया है, पैराग्राफ संख्या 16 में माना है जिसे आगे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

"16. इस प्रकार, देरी और लापरवाही के सिद्धांत को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। रिट कोर्ट को दिए गए स्पष्टीकरण और उसकी स्वीकार्यता को तौलना आवश्यक है। कोर्ट को यह ध्यान में रखना चाहिए कि वह असाधारण और न्यायसंगत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर रहा है। एक संवैधानिक न्यायालय के रूप में उसका कर्तव्य है कि वह नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करे, लेकिन साथ ही उसे इस प्राथमिक सिद्धांत पर भी ध्यान देना चाहिए कि जब कोई पीड़ित व्यक्ति, बिना किसी पर्याप्त कारण के, अपनी मर्जी से या अपने अवकाश पर न्यायालय में आता है, तो न्यायालय का यह कानूनी दायित्व होगा कि वह इस बात की जांच करे कि विलंबित चरण में की गई शिकायत पर विचार किया जाना चाहिए या नहीं। ध्यान रहे, देरी न्याय के मार्ग में बाधा बनती है। कुछ परिस्थितियों में देरी और लापरवाही घातक नहीं हो सकती है, लेकिन अधिकांश परिस्थितियों में अत्यधिक देरी केवल उस वादी के लिए आपदा को आमंत्रित करेगी जो न्यायालय का दरवाजा खटखटाता है। देरी वादी की निष्क्रियता और निष्क्रियता को दर्शाती है - एक वादी जो अपने अधिकार को भूल गया है। बुनियादी मानदंड, अर्थात्, "विलंब समय का सबसे बड़ा चोर है" और दूसरा,

कानून किसी को फीनिक्स की तरह सोने और उठने की अनुमति नहीं देता है।
देरी से खतरा पैदा होता है और लिस को नुकसान होता है।

14. वर्तमान में ऐसा मामला नहीं है, जहां याचिकाकर्ता को उपचार का लाभ उठाने से प्रतिबंधित किया गया था और समानता के बिंदु पर याचिकाकर्ता की शिकायत पर विचार करने में इस न्यायालय द्वारा अधिक लचीला दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। तथ्यात्मक पहलू यह दर्शाता है कि याचिकाकर्ता सभी घटनाक्रमों से अवगत था। नियुक्ति प्राधिकारी ने 18 जनवरी, 2005 को आदेश पारित किया था, अपीलीय प्राधिकारी ने 02.08.2005 को आदेश पारित किया था और समीक्षा समिति ने 06.06.2006 को आदेश पारित किया था। याचिकाकर्ता ने छह साल की देरी के बाद वर्ष 2012 में उक्त आदेशों को चुनौती दी और इस तरह, इस आधार पर वर्तमान रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

15. अब मैं इस बात पर विचार करूंगा कि क्या याचिकाकर्ता का कोई अन्य कृत्य कदाचार है।

16. स्ट्राउड के न्यायिक शब्दकोष में परिभाषित कदाचार की परिभाषा उद्धृत करना लाभदायक है जो इस प्रकार है:

"कदाचार का अर्थ है, गलत इरादे से किया गया कदाचार; लापरवाही, निर्णय की त्रुटि या निर्दोष गलती के कार्य, ऐसे कदाचार की श्रेणी में नहीं आते हैं"।

17. **एम.एम.मल्होत्रा बनाम के मामले में भारत संघ ने (2005) 8 एससीसी 351** में रिपोर्ट की, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि "ऐसी गतिविधियों की श्रेणी जो सार्वजनिक सेवा के हित के साथ असंगत हैं और एक लोक सेवक की स्थिति, पद और गरिमा के अनुरूप नहीं हैं, इतनी विविधतापूर्ण हैं कि नियोक्ता के लिए ऐसे कृत्यों की विस्तृत गणना करना और कदाचार की श्रेणियों का इलाज करना असंभव होगा। इसलिए, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि "कदाचार" शब्द सटीक परिभाषा के योग्य नहीं है। लेकिन साथ ही, सटीक परिभाषा के अयोग्य होने के बावजूद, "कदाचार" शब्द संदर्भ, प्रदर्शन में चूक और अनुशासन और दिन की प्रकृति पर इसके प्रभाव से अपना अर्थ प्राप्त करता है। शिकायत किए गए कार्य में निषिद्ध गुण या चरित्र होना चाहिए और इसके दायरे को विषय-वस्तु और संदर्भ के संदर्भ में समझा जाना चाहिए जिसमें शब्द आता है, क़ानून के दायरे और उस सार्वजनिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जिसे वह पूरा करना चाहता है।"

18. सर्वोच्च न्यायालय ने यह अच्छी तरह से स्थापित किया है कि, *"त्रुटि लापरवाही का संकेत हो सकती है और दोषी होने की डिग्री लापरवाही की गंभीरता को इंगित कर सकती है। लापरवाही अक्सर जानबूझकर की गई दुष्टता या द्वेष से अधिक नुकसान पहुंचा सकती है। उस संतरी के क्लासिक उदाहरण को छोड़कर जो अपनी पोस्ट पर सोता है और दुश्मन को घुसने देता है।"*

19. अभिलेख से पता चलता है कि याचिकाकर्ता बैंक के हितों की रक्षा के लिए ईमानदारी से कदम उठाने में विफल रहा है और अपने कर्तव्यों का पूरी निष्ठा और लगन से निर्वहन नहीं किया है तथा बैंक को हुई वित्तीय हानि के लिए याचिकाकर्ता को जिम्मेदार ठहराया गया है जो कदाचार के अंतर्गत आता है, क्योंकि याचिकाकर्ता ने श्री संजीव कुमार सिंह के एसबी खाता संख्या 01190010729 को खोलने के लिए अधिकृत करते समय चूक/अनियमितताएं की हैं; जमाकर्ता और परिचयकर्ता का उचित साक्षात्कार नहीं किया गया; खाताधारक के पते की सत्यता की पुष्टि करने के लिए उसके दर्ज पते पर कोई धन्यवाद पत्र नहीं भेजा गया और जमाकर्ता द्वारा 10 सितम्बर, 2002 को प्रस्तुत किए गए सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, नई दिल्ली के नाम से जारी 73,785/- रुपए के तीन चेक को "एस" बुक के माध्यम से नहीं भेजा गया और चेक को 11 सितम्बर, 2002 को सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, गोपालगंज में समाशोधन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया और उससे प्राप्त राशि को उसी दिन जमाकर्ता के खाते में जमा कर दिया गया और बाद में यह पाया गया कि जमाकर्ता उक्त चेक का वास्तविक आदाता नहीं था, जिसने बैंक को 73,500/- रुपए की हानि पहुंचाते हुए चेक को वापस ले लिया/धोखाधड़ी की।

20. उपरोक्त न्यायिक निर्णय के आलोक में, मैं पाता हूं कि याचिकाकर्ता का कृत्य लापरवाही नहीं माना जा सकता, बल्कि यह दुर्भावनापूर्ण इरादे से किया गया कदाचार माना जाता है।

21. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, मैं पाता हूँ कि याचिकाकर्ता द्वारा ***रवि यशवंत भोईर (उपर्युक्त)*** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर भरोसा करना याचिकाकर्ता के लिए कोई मदद नहीं करता है। पैराग्राफ संख्या 13, 15, 16, 18 और 19 को पुनः प्रस्तुत करना लाभदायक होगा:

> *"13. केवल निर्णय की त्रुटि जिसके परिणामस्वरूप लापरवाहीपूर्ण कार्य किया गया है, कदाचार नहीं माना जाता है। हालांकि, असाधारण परिस्थितियों में, लगन से काम न करना कदाचार हो सकता है। संस्था की प्रतिष्ठा के लिए हानिकारक कार्य भी*

कदाचार माना जा सकता है। अधिकार से परे कार्य करना कदाचार हो सकता है। जब पदाधिकारी से कार्य को संभालने में पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी से कार्य करने की अपेक्षा की जाती है, तो निधियों आदि का कोई भी दुरुपयोग, यहां तक कि अस्थायी, गंभीर कदाचार माना जाता है, जिसके लिए कड़ी सजा दी जाती है। (देखें अनुशासनिक प्राधिकरण-सह-विनियमन प्रबंधक बनाम निकुंज बिहारी पटनायक [(1996) 9 एससीसी 69: 1996 एससीसी (एलएंडएस) 1194], तमिलनाडु सरकार बनाम केएन राममूर्ति [(1997) 7 एससीसी 101: 1997 एससीसी (एल एंड एस) 1749 : एआईआर 1997 एससी 3571], इंस्पेक्टर प्रेम चंद बनाम दिल्ली सरकार [(2007) 4 एससीसी 566 : (2007) 2 एससीसी (एल एंड एस) 58] और एसबीआई बनाम एस.एन. गोयल [(2008) 8 एससीसी 92 : (2008) 2 एससीसी (एल एंड एस) 678 : एआईआर 2008 एससी 2594]।)

15. *एम.एम. मल्होत्रा बनाम भारत संघ [(2005) 8 एससीसी 351: 2005 एससीसी (एलएंडएस) 1139: एआईआर 2006 एससी 80] में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार स्पष्टीकरण दिया: (एससीसी पृष्ठ 362, पैरा 17)*

"17.... इसलिए, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि 'कदाचार' शब्द की संक्षिप्त परिभाषा के योग्य नहीं है। लेकिन साथ ही, सटीक परिभाषा के अयोग्य होने के बावजुद, नहीं की जा सकती, लेकिन विचार करने पर 'कदाचार' शब्द का अर्थ संदर्भ, प्रदर्शन में चूक और अनुशासन और कर्तव्य की प्रकृति पर इसके प्रभाव से लिया जाता है। जिस कृत्य की शिकायत की गई है, उसमें कोई निषिद्ध गुण या चरित्र नहीं है और इसके दायरे को विषय-वस्तु और संदर्भ के संदर्भ में समझा जाना चाहिए, जिसमें यह शब्द आता है, कानून के दायरे और उस सार्वजनिक उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, जिसकी पूर्ति करना चाहता है।

बलदेव सिंह गांधी बनाम पंजाब राज्य [(2002) 3 एससीसी 667: एआईआर 2002 एससी 1124] में भी इसी तरह का दृष्टिकोण दोहराया गया है।

16. *पदधारी में व्यक्तिगत गुणों की अनुपस्थिति या कमी के बारे में निष्कर्ष कदाचार के बराबर नहीं है, जिसके कारण संबंधित व्यक्ति को दण्ड का भागी बनाया जा सके। (देखें यूनियन ऑफ इंडिया बनाम जे. अहमद [(1979) 2 एस.सी.सी. 286: 1979 एस.सी.सी. (एल.एंड.एस.) 157: ए.आई.आर. 1979 एस.सी. 1022]।)*

18. *"कदाचार" शब्द को किसी स्थापित और निश्चित नियम का उल्लंघन, निषिद्ध कार्य, गैरकानूनी व्यवहार, चरित्र में स्वेच्छाचारिता के रूप में समझा जाना चाहिए। यह औचित्य और कुप्रबंधन में कदाचार का पर्याय हो सकता है। किसी विशेष मामले में, लापरवाही या असावधानी भी कदाचार हो सकती है, उदाहरण के लिए, जब कोई चौकीदार अपनी ड्यूटी छोड़कर सिनेमा देखने जाता है, तो भले ही संस्थान में कोई चोरी या नुकसान न हो, लेकिन ड्यूटी की जगह छोड़ना ही कदाचार है। अनुशासनात्मक बलों के मामले में यह अधिक गंभीर हो सकता है।*

19. *इसके अलावा, "कदाचार" शब्द की व्याख्या और समझ उस विषय-वस्तु और संदर्भ के संदर्भ में की जानी चाहिए जिसमें यह शब्द आता है, और उस क़ानून के दायरे और उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए जिसकी व्याख्या की जा रही है। कदाचार को कदाचार की प्रकृति के संदर्भ में मापा जाना चाहिए और इसे कदाचार के परिणामों के साथ देखा जाना चाहिए कि क्या यह सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक है।"*

22. इस संबंध में, सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय के पैराग्राफ संख्या 15 में ***एम.एम.मल्होत्रा (उपर्युक्त)*** में निर्धारित कानून पर भरोसा किया है क्योंकि याचिकाकर्ता का आचरण व्यक्तिगत गुणवत्ता की कमी नहीं माना जा सकता है, बल्कि याचिकाकर्ता का आचरण सार्वजनिक हित के लिए हानिकारक है। इस संबंध में, ***महाप्रबंधक, अपीलीय प्राधिकरण, बैंक ऑफ इंडिया और अन्य बनाम मोहम्मद निजामुद्दीन (2006) 7 एससीसी 410*** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का भी संदर्भ लिया जा सकता है।

23. उपरोक्त चर्चा किए गए तथ्यों और कानून की पृष्ठभूमि में, मुझे अधिकारियों द्वारा पारित आदेश में कोई अवैधता नहीं दिखती है और तदनुसार रिट याचिका खारिज की जाती है।

24. लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(पुर्णनेन्दू सिंह, न्यायमूर्ति)

संजय/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।